

योग और प्याज, शामा की सर्पदंश से मुक्ति विषूचिका(हैजा) निवारणार्थ नियमों का उल्लंघन, गुरु भक्ति की कठिन परीक्षा।

प्रस्तावना

वस्तुतः मनुष्य त्रिगुणामय (तीन गुण अर्थात् सत्व-रज-तम) है तथा माया के प्रभाव से ही उसे ऐसा भासित होने लगता है कि मैं शरीर हूँ। दैहिक बुद्धि के आवरण के कारण ही वह ऐसी धारणा बना लेता है कि मैं ही कर्ता और उपभोग करने वाला हूँ और इस प्रकार वह अपने को अनेक कष्टों में स्वयं फँसा लेता है। फिर उसे उससे छुटकारे का कोई मार्ग नहीं सूझता। **मुक्ति का एकमात्र उपाय है-गुरु के श्री चरणों में अचल प्रेम और भक्ति।** सबसे महान् अभिनयकर्ता भगवान् साई ने भक्तों को पूर्ण आनन्द पहुँचाकर उन्हें निज-स्वरूप में परिवर्तित कर लिया है। उपर्युक्त कारणों से **हम साईबाबा को ईश्वर का ही अवतार मानते हैं।** परन्तु वे सदा यही कहा करते थे कि “ मैं तो ईश्वर का दास हूँ।” अवतार होते हुए भी मनुष्य को किस प्रकार आचरण करना चाहिए तथा अपने वर्ण के कर्तव्यों को किस प्रकार निभाना चाहिए, इसका उदाहरण उन्होंने लोगों के समक्ष प्रस्तुत किया। जो सब जड़ और चेतन पदार्थों में ईश्वर के दर्शन करता हो, उसको विनयशीलता ही उपर्युक्त थी। उन्होंने किसी की उपेक्षा या अनादर नहीं किया। वे सब प्राणियों में भगवद्दर्शन करते थे। उन्होंने यह कभी नहीं कहा कि “ मैं अनल हक्क(सोऽहम्) हूँ। ” वे सदा यही कहते थे कि “मैं तो यादे हक्क (दासोऽहम्) हूँ।” **अल्ला मालिक” सदा उनके होठोंपर था।** हम अन्य संतों से परिचित नहीं हैं और न हमें यही ज्ञात है कि वे किस प्रकार आचरण किया करते हैं अथवा उनकी दिनचर्या इत्यादि क्या है। ईश-कृपा से केवल हमें इतना ही ज्ञात है कि वे अज्ञान और बद्ध जीवों के निमित्त स्वयं अवतीर्ण होते हैं। **शुभ कर्मों के परिणामस्वरूप ही हममें सन्तों की कथाएँ और लीलाएँ श्रवण करने की इच्छा उत्पन्न होती है, अन्यथा नहीं।** अब हम मुख्य कथा पर आते हैं।

योग और प्याज

एक समय कोई एक योगाभ्यासी नानासाहेब चाँदोरकर के साथ शिरड़ी आया। उसने पातंजलि योगसूत्र तथा योगशास्त्र के अन्य ग्रन्थों का विशेष अध्ययन किया था, परन्तु वह व्यावहारिक अनुभव से वंचित था। मन एकाग्र न हो सकने के कारण वह थोड़े समय के लिए भी समाधि न लगा सकता था। यदि साईबाबा की कृपा प्राप्त हो जाए तो उनसे अधिक समय तक समाधि अवस्था प्राप्त करने की विधी ज्ञात हो जाएगी, इस विचार से वह शिरड़ी आया और जब मस्जिद में पहुँचा तो साईबाबा को प्याजसहित रोटी खाते देख उसे ऐसा विचार आया कि यह कच्ची प्याजसहित सुखी रोटी खाने वाला व्यक्ति मेरी कठिनाइयों को किस प्रकार हल कर सकेगा ? साईबाबा अन्तर्ज्ञान से उसका विचार जानकर तुरन्त नानासाहेब से बोले कि “ ओ नाना ! जिसमें प्याज हजम करने की शक्ति है, उसको ही उसे खाना चाहिए, अन्य को नहीं।” इन शब्दों से अत्यन्त विस्मित होकर योगी ने साईचरणों में पूर्ण आत्मसमर्पण कर दिया। शुद्ध और निष्कपट भाव से अपनी कठिनाइयाँ बाबा के समक्ष प्रस्तुत करके उनसे उनका हल प्राप्त किया और इस प्रकार संतुष्ट और सुखी होकर बाबा के दर्शन और उदी लेकर वह शिरड़ी से चला गया।

शामा की सर्पदंश से मुक्ति

कथा प्रारंभ करने से पूर्व हेमाङ्गपंत लिखते हैं कि जीव की तुलना पालतू तोते से की जा सकती है, क्योंकि दोनों ही बद्ध हैं। एक शरीर में तो दूसरा पिंजड़े में। दोनों ही अपनी बद्धावस्था को श्रेयस्कर समझते हैं। परंतु यदि हरिकृपा से उन्हें कोई उत्तम गुरु मिल जाए और वह उनके ज्ञानचक्षु खोलकर उन्हें बंधन मुक्त कर दे तो उनके जीवन का स्तर उच्च हो जाता है, जिसकी तुलना में पूर्व संकीर्ण स्थिति सर्वथा तुच्छ ही थी।

श्री साईबाबांच्या शुभाशिर्वादासह

गत अध्याय में किस प्रकार श्री. मिरीकर पर आने वाले संकट की पूर्वसूचना देकर उन्हें उससे बचाया गया, इसका वर्णन किया जा चुका है। पाठकवृन्द अब उसी प्रकार की और एक कथा श्रवण करें। एक बार शामा को विषधर सर्प ने उसके हाथ की उँगली में डस लिया। समस्त शरीर में विष का प्रसार हो जाने के कारण वे अत्यन्त कष्ट का अनुभव करके क्रंदन करने लगे कि अब मेरा अन्तकाल समीप आ गया है। उनके इष्ट मित्र उन्हें भगवान विठोबा के पास ले जाना चाहते थे, जहाँ इस प्रकार की समस्त पीड़ाओं की योग्य चिकित्सा होती है; परन्तु शामा मस्जिद की ओर ही दौड़ा-अपने विठोबा श्री साईबाबा के पास। जब बाबा ने उन्हें दूर से आते देखा तो वे झिड़कने और गाली देने लगे। वे क्रोधित होकर बोले-“अरे ओ नादान कृतघ्न बम्मन ! ऊपर मत चढ़। सावधान, यदि ऐसा किया तो ।” और फिर गर्जना करते हुए बोले, “ हट, दूर हट, नीचे उतर।” श्री साईबाबा को इस प्रकार अत्यंत क्रोधित देख शामा उलझन में पड़ गया और निराश होकर सोचने लगा कि केवल मस्जिद ही तो मेरा घर है और साईबाबा मात्र असहायोंके आश्रयदाता हैं और जब वे ही इस प्रकार मुझे यहाँ से भगा रहे हैं तो मैं अब किसकी शरण में जाऊँ? उसने अपने जीवन की आशा ही छोड़ दी और वहीं शान्तिपूर्वक बैठ गया। थोड़े समय के पश्चात् जब बाबा पूर्ववत् शांत हुए तो शामा ऊपर आकर उनके समीप बैठ गया। तब बाबा बोले, “ डरो नहीं। तिल मात्र भी चिन्ता मत करो। दयालु फकीर तुम्हारी अवश्य रक्षा करेगा। घर जाकर शान्ति से बैठो और बाहर न निकलो। मुझपर विश्वास कर निर्भय होकर चिन्ता त्याग दो। ” उन्हें घर भिजवाने के पश्चात् ही पीछे से बाबा ने तात्या पाटील और काकासाहेब दीक्षित के द्वारा यह कहला भेजा कि वह इच्छानुसार भोजन करे; घरे में टहलते रहें; लेटें नहीं और न शयन करें। कहने की आवश्यकता नहीं कि आदेशों का अक्षरक्षः पालन किया गया और थोड़े समय में ही वे पूर्ण स्वस्थ हो गए। इस विषय में केवल यही बात स्मरण योग्य है कि बाबा के शब्द (हट, दूर हट, नीचे उतर) शामा को लक्ष्य करके नहीं कहे गए थे, जैसा कि ऊपर से प्रतीत होता है, वरन् उस साँप और उसके विष के लिए ही यह आज्ञा थी (अर्थात् शामा के शरीर में विष न फैलाने की आज्ञा थी।) अन्य मंत्र शास्त्रों के विशेषज्ञों की तरह बाबा ने किसी मंत्र या मंत्रोक्त चावल या जल आदि का प्रयोग नहीं किया।

इस कथा और इसी प्रकार की अन्य कथाओं को सुनकर साईबाबा के चरणों में यह दृढ़ विश्वास हो जायगा कि यदि मायायुक्त संसार को पार करना हो तो केवल श्री साईचरणों का हृदय में ध्यान करो।

हैजा महामारी (विषुचिका)

एक बार शिरडी विषुचिका के प्रकोप से दहल उठी और ग्रामवासी भयभीत हो गए। उनका पारस्परिक सम्पर्क अन्य गाँव के लोगों से प्रायःसमाप्त सा हो गया। तब गाँव के पंचों ने एकत्रित होकर दो आदेश प्रसारित किए। प्रथम-लकड़ी की एक भी गाड़ी गाँव में न आने दी जाए। द्वितीय-कोई भी बकरे की बलि न दे। इन आदेशों का उल्लंघन करने वाले को मुखिया और पंचों द्वारा दंड दिया जाएगा। बाबा तो जानते ही थे कि यह सब केवल अंधविश्वास ही है और इसी कारण उन्होंने इन हैजा के आदेशों की कोई चिन्ता न की। जब ये आदेश लागू थे, तभी एक लकड़ी की गाड़ी गाँव में आई। सबको ज्ञात था कि गाँव में लकड़ी का अधिक अभाव है, फिर भी लोग उस गाड़ीवाले को भगाने लगे। यह समाचार कहीं बाबा के पास तक पहुँच गया। तब वे स्वयं वहाँ आए और गाड़ी वाले से गाड़ी मस्जिद में ले चलने को कहा। बाबा के विरुद्ध कोई चूँ-चपाट तक भी न कर सका। यथार्थ में उन्हें धूनी के लिए लकड़ियों की अत्यन्त आवश्यकता थी और इसीलिए उन्होंने वह गाड़ी मोल ले ली। एक महान् अग्निहोत्री की तरह उन्होंने जीवन भर धूनी को चैतन्य रखा। बाबा की धूनी दिनरात प्रज्वलित रहती थी और इसलिए वे लकड़ियाँ एकत्रित कर रखते थे।

बाबा का घर अर्थात् मस्जिद सबके लिए सदैव खुली थी। उसमें किसी ताले चाभी की आवश्यकता न थी। गाँव के गरीब आदमी अपने उपयोग के लिए उसमें से लकड़ियाँ निकाल भी ले जाया करते थे, परंतु बाबा ने इस पर कभी कोई आपत्ति न की। बाबा तो संपूर्ण विश्व को ईश्वर से ओतप्रोत देखते थे, इसलिए उनमें किसी के प्रति घृणा या शत्रुता की भावना न थी। पूर्ण विरक्त होते हुए भी उन्होंने एक साधारण गृहस्थ का-सा उदाहरण लोगों के समक्ष प्रस्तुत किया।

गुरुभक्ति की कठिन परीक्षा

श्री साईबाबांच्या शुभाशिर्वादासह

अब देखिए, दूसरे आदेश की भी बाबा ने क्या दुर्दशा की। वह आदेश लागू रहते समय कोई मस्जिद में एक बकरा बलि देने को लाया। वह अत्यन्त दुर्बल, बूढ़ा और मरने ही वाला था। उस समय मालेगाँव के फकीर पीरमोहम्मद उर्फ बड़े बाबा भी उनके समीप ही खड़े थे। बाबा ने उन्हें बकरा काटकर बलि चढ़ाने को कहा। श्री साईबाबा बड़े बाबा का अधिक आदर किया करते थे। इस कारण वे सदैव उनके दाहिनी ओर ही बैठाया करते थे। सबसे पहले वे ही चिलम पीते और फिर बाबा को देते, बाद में अन्य भक्तों को। जब दोपहर को भोजन परोस दिया जाता, तब बाबा बड़े बाबा को आदरपूर्वक बुलाकर अपने दाहिनी ओर बिठाते और तब सब भोजन करते। बाबा के पास जो दक्षिणा एकत्रित होती, उसमें से वे ५० रुपये प्रतिदिन बड़े बाबा को दे दिया करते थे। जब वे लौटते तो बाबा भी उनके साथ सौ कदम तक जाया करते थे। उनका इतना आदर होते हुए भी जब बाबा ने उनसे बकरा काटने को कहा तो उन्होंने अस्वीकार कर स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि बलि चढ़ाना व्यर्थ ही है। तब बाबा ने शामा से बकरे की बलि के लिए कहा। वे राधाकृष्ण माई के घर जाकर एक चाकू ले आए और उसे बाबा के सामने रख दिया। राधाकृष्णमाई को जब कारण का पता चला तो उन्होंने चाकू वापस मँगवा लिया। अब शामा दूसरा चाकू लाने के लिए गए, किन्तु बड़ी देर तक मस्जिद में न लौटे। तब काकासाहेब दीक्षित की बारी आई। वह सोना सच्चा तो था, परन्तु उसको कसौटी पर कसना भी अत्यन्त आवश्यक था। बाबा ने उनसे चाकू लाकर बकरा काटने को कहा। वे साठेवाड़े से एक चाकू ले आए और बाबा की आज्ञा मिलते ही काटने को तैयार हो गए। उन्होंने पवित्र ब्राह्मण-वंश में जन्म लिया था और अपने जीवन में वे बलिकृत्य जानते ही न थे। यद्यपि हिंसा करना निंदनीय है, फिर भी वे बकरा काटने के लिए उद्यत हो गए। सब लोगों को आश्चर्य था कि बड़े बाबा एक यवन होते हुए भी बकरा काटने को सहमत नहीं हैं और यह एक सनातन ब्राह्मण बकरे की बलि देने की तैयारी कर रहा है। उन्होंने अपनी धोती ऊपर चढ़ा फेंटा कस लिया और चाकू लेकर हाथ ऊपर उठाकर बाबा की अन्तिम आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे। बाबा बोले, “अब विचार क्या कर रहे हो? ठीक है, मारो।” जब उनका हाथ नीचे आने ही वाला था, तब बाबा बोले “ठहरो, तुम कितने दुष्ट हो? ब्राह्मण होकर तुम बकरे की बलि दे रहे हो?” काकासाहेब चाकू नीचे रख कर बाबा से बोले “आपकी आज्ञा ही हमारे लिए सब कुछ है, हमें अन्य आदेशों से क्या? हम तो केवल आपका ही सदैव स्मरण तथा ध्यान करते हैं और दिन रात आपकी आज्ञा का ही पालन किया करते हैं। हमें यह विचार करने की आवश्यकता नहीं कि बकरे को मारना उचित है या अनुचित? और न हम इसका कारण ही जानना चाहते हैं। हमारा कर्तव्य और धर्म तो निःसंकोच होकर गुरु की आज्ञा का पूर्णतः पालन करने में है।” तब बाबा ने काकासाहेब से कहा कि “मैं स्वयं ही बलि चढ़ाने का कार्य करूँगा।” तब ऐसा निश्चित हुआ कि तकिये के पास जहाँ बहुत से फकीर बैठते हैं, वहाँ चलकर इसकी बलि देनी चाहिए। जब बकरा वहाँ ले जाया जा रहा था, तभी रास्ते में गिर कर वह मर गया।

भक्तों के प्रकार का वर्णन कर श्री. हेमाङ्गपंत यह अध्याय समाप्त करते हैं। भक्त तीन प्रकार के हैं-

- (१) उत्तम
- (२) मध्यम और
- (३) साधारण।

प्रथम श्रेणी के भक्त वे हैं, जो अपने गुरु की इच्छा पहले से ही जानकर अपना कर्तव्य मान कर सेवा करते हैं। द्वितीय श्रेणी के भक्त वे हैं, जो गुरु की आज्ञा मिलते ही उसका तुरन्त पालन करते हैं। तृतीय श्रेणी के भक्त वे हैं, जो गुरु की आज्ञा टालते हुए पग-पग पर त्रुटि किया करते हैं। भक्तगण यदि अपनी जागृत बुद्धि और धैर्य धारण कर दृढ़ विश्वास स्थिर करें तो निःसन्देह उनका आध्यात्मिक ध्येय उनसे अधिक दूर नहीं है। श्वासोच्छ्वास का नियंत्रण, हठ योग या अन्य कठिन साधनाओं की कोई आवश्यकता नहीं है। जब शिष्य में उपर्युक्त गुणों का विकास हो जाता है और जब अग्रिम उपदेशों के लिये भूमिका तैयार हो जाती है, तभी गुरु स्वयं प्रगट होकर उसे पूर्णता की ओर ले जाते हैं। अगले अध्याय में बाबा के मनोरंजक हास्य-विनोद के सम्बन्ध में चर्चा करेंगे।

॥ श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु॥